Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

प्राकृतिक संसाधनों का विश्लेषण

डॉ. सुनील कुमार ओझा
असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग
अमरनाथ पी.जी. कॉलेज, दूबेछपरा
बलिया (उ.प्र.)

सारांश

प्रस्तुत शोध–पत्र में मऊ जनपद में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का विश्लेषण किया गया है। जनपद मऊ में खनिज एवं शक्ति संसाधनों का अभाव है। अतः प्राकृतिक संसाधनों के रूप में इस जनपद में मात्र जल संसाधन, वन संसाधन एवं मृदा संसाधनों की ही उपलब्धता है। अतः प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों के रूप में जल संसाधन, वन संसाधन, मृदा संसाधन, का ही अध्ययन किया गया है।

बीज शब्द – प्राकृतिक संसाधन, भौगोलिक पर्यावरण, धरातलीय स्रोत।

अध्ययन का उद्देश्य : प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि प्राकृतिक संसाधनों का विश्लेषण करके उनके सही उपयोग और उससे होने वाले पर्यावरणीय संरक्षण की दिशा को निर्धारित किया जा सके।

विधि तंत्र – प्रस्तुत अध्ययन में पूर्ववर्ती विद्वानों द्वारा प्रस्तुत विचारों और संकल्पनाओं का विवेचनात्मक स्वरूप प्रस्तुत किया गया है तथा विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया है।

परिचय

भौगोलिक या प्राकृतिक पर्यावरण का प्रायः अर्थ उन अवस्थाओं से लगाया जाता है, जिनका अस्तित्व मनुष्य के कार्यों से स्वतंत्र है, जो मानव द्वारा निर्मित या रचित नहीं है और जो बिना मनुष्य के अस्तित्व एवं कार्यों से प्रभावित हुए समय, काल एवं दशा के अनुसार स्वतः परिवर्तित होती रहती है।

डा. डेविस के अनुसार ''मनुष्य के संबंध में भौगोलिक पर्यावरण से अभिप्राय भूमि या मानव के चारों ओर फैले उन सभी धरातलीय तथा अन्य प्राकृतिक स्वरूपों से है, जिनमें वह रहता है, जिनका उसकी आदतों और क्रियाओं पर प्रभाव पड़ता है।''

जीवन का विकास अनुकूल पर्यावरण द्वारा ही सम्भव है। अर्थात जीवन एवं पर्यावरण में एक अलग ही अटूट पारस्परिक संबंध रहता है। जीव एवं पर्यावरण एक–दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं। इस प्रकार किसी क्षेत्र के सभी जीवों तथा भौतिक पर्यावरण के द्वारा एक परितंत्र का निर्माण होता है। मानव भी अन्य सभी जंतुओं एवं पौधों की भांति परितंत्र का एक अभिन्न अंग है, लेकिन वह अन्य सभी जीवों से भिन्न है, क्योंकि वह सब अपने एवं पर्यावरण से ही सीखता है तथा उसे अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करता रहता है। उसे अपने इस प्रयास में सफलता भी मिलती रहती है। मानव, पर्यावरण अथवा परितंत्र के अनेक तत्वों का या तत्व समुच्चय का अपने जीविकोपार्जन, विकास एवं आराम के लिए उपयोग भी करता है। कुछ उपयोगी तत्व प्रकृति के ऐसे उपहार होते हैं, जिन्हें मनुष्य स्वयं पैदा नहीं कर सकता है। प्राकृतिक उपहारों

को ही 'प्राकृतिक संसाधन' कहते हैं (सिंह, उर्मिलेश, 2002, पृ0 26–27)।

प्राकृतिक पर्यावरण का तात्पर्य उन सम्पूर्ण भौतिक शक्तियों, प्रक्रियाओं और तत्वों से है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव मानव पर पड़ता है। इन सभी शक्तियों के अंतर्गत सूर्यताप, पृथ्वी की दैनिक एवं वार्षिक परिभ्रमण की गतियां, गुरूत्वाकर्षण शक्ति, ज्वालामुखी क्रियाएं, भू–पटल की गति तथा जीवन संबंधी दृश्य सम्मिलित किये गये हैं। इन शक्तियों द्वारा पृथ्वी पर अनेक प्रकार की क्रियाएं होती हैं, जिनसे पर्यावरण के तत्व उत्पन्न होते हैं और इन सबका प्रभाव मानव की क्रियाओं पर पड़ता है।

प्रक्रियाओं के अंतर्गत आने वाले कारकों में भूमि का अपक्षय, अवसादीकरण, ताप विकिरण एवं चालन, ताप संवहन, वायु एवं जल में गति का पैदा होना, जीव–जातियों का जन्म–मरण और विकास आदि सम्मिलित किये जाते हैं। इन प्रक्रियाओं द्वारा प्राकृतिक पर्यावरण में अनेक क्रियाएं उत्पन्न होती हैं, जो मानव के क्रियाकलापों पर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालती है। प्राकृतिक पर्यावरण के तत्वों के अंतर्गत उन तत्वों को सम्मिलित किया जाता है जो शक्तियों और प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप धरातल पर उत्पन्न होते हैं। प्राकृतिक संसाधनों का भी आर्थिक महत्व है, क्योंकि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अपने ज्ञान एवं प्राविधिकी के द्वारा ही प्राकृतिक संसाधनों को आर्थिक संसाधनों में परिवर्तित करता रहता है। अंत में इनका शोषण एवं कुशलतापूर्वक उपयोग ही इन सबको उपयोग के अनुरूप एवं मूल्यवान बना देता है। इस प्रकार प्राकृतिक संसाधन तभी मूल्यवान एवं

महत्वपूर्ण बनते हैं, जब इसके उपयोग को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं जीवन स्तर उठाने में इसके समुचित उपयेाग का ज्ञान होता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राकृतिक संसाधनों की संकल्पना संस्कृति–आवद्ध है। प्राकृतिक संसाधनों की संकल्पना विस्तृत हो गयी है। यहां तक कि प्राकृतिक घटनाएं, पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल, जिसको मनुष्य अपनी कुछ आर्थिक क्रियाओं के लिए प्रयुक्त करता है, प्राकृतिक संसाधन में सन्निहित है। इसी कारण समस्त भू–दृश्य, इसकी जलवायु, बहता हुआ जल, झरने, खाड़ियां, जल–पोताश्रय सहित ज्वारनदमुख, मिट्टियां जिन पर हम फसल उाते है, वन तथा नाना प्रकार के जीव–जन्तु, खनिज पदार्थ एवं शक्ति के साधन आदि आधारभूत संसाधन है।

विश्लेषण एवं व्याख्या

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में खनिज एवं शक्ति संसाधनों का अभाव है। अतः प्राकृतिक संसाधनों के रूप में इस जनपद में मात्र जल संसाधन, वन संसाधन एवं मृदा संसाधनों की ही उपलब्धता है। अतः प्रस्तुत अध्याय में अध्ययन क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों के रूप में जल संसाधन, वन संसाधन, मृदा संसाधन, का ही अध्ययन किया गया है।

जल संसाधन :– जल मानव के लिए एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण संसाधन है, जिसके बिना जिवन संभव नही है। ठीक उसी तरह जितना की स्थल खण्ड में पृथ्वी के प्रमुख जल स्त्रोत भाग, नदीयॉ और झील है। मानव जीवन में जल संसाधन के विभिन्न उपयोग है। जल मानव हेतु पीने के अतिरिक्त सिंचाई,

विद्युत उत्पादन, मत्स्य पालन, परिवहन, उद्योग आदी हेतु उपयोगी है। कृषि के विकास एवं स्तर निर्धारण में जल सर्वाधिक महत्तवपूर्ण एवं निर्णायाक तत्व है।

जल पृथ्वी पर सभी प्रकार के जीवों के अस्तित्व के लिए परम आवश्यक तत्व है। वनस्पतियों के संम्पूर्ण भार का 70 से 95 प्रतिशत जन्तुओं के शरीर का 70 से 80 प्रतिशत और मानव शरीर का 70 से 75 प्रतिशत भाग जल से बना होता है। मानव के लिए जल का महत्व इस तथ्य से स्पष्ट है कि मानव अस्थि का 30 प्रतिशत यकृत का 70 प्रतिशत, मॉशपेशियों का 75 प्रतिश मस्तिष्क का 79 प्रतिशत, रक्त का 80 प्रतिशत और वृक्क का 83 प्रतिशत भाग जल से निर्मित होता हैं। अन्य सभी प्रकार के जीवों की तुलना में मानव के लिए जल का अधिक महत्व है। एक संसाधन के रूप में जल किसी भी देश या प्रदेश के विकाश के लिए आवश्यक होता हैं।(पाठक गणेश कुमार एवं चौबें, संजीव कुमार 2004)

अध्ययन क्षेत्र में वर्षा जल का मुख्य स्त्रोत है। जनपद में वर्षा से प्राप्त जल तालाब , पोखरों एवं नालों के माध्यम से बहता हुआ नदियों एवं तालों में चला जाता है। वाष्पीकरण एवं निम्न गमन प्रक्रिया से गुजरता हुआ यह जल सतही एवं भूमिगत दोनों रूपों में विद्यमान है। सम्पूर्ण मध्य गंगा घाटी में मिट्टी एवं वर्षा की उपयुक्तता के कारण भूमिगत जल का यह भण्डार अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्यों हेतु एक महत्तवपूर्ण कारक है। यहां भूमिगत जल की सतह औसतन 15–20 फीट की गहराई पर विद्यमान है। भूमिगत जल का प्रमुख उपयोग जलकूल, कुऑ तथा हैण्डपम्प द्वारा होता है। सतही जल नदीयों,

तालों, पोखरों एवं नहरों में विद्यमान है। घाघरा, टोंस (छोटी सरयू) एवं भैसही सतत् प्रवाही नदीयॉ सतही जल का प्रमुख स्त्रोत हैं। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में दोहरीघाट पम्प कैनाल द्वारा सिचाई की पर्याप्त सुविधा उपलब्ध है।

जल की उपलब्धता –

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में जल संसाधन की उपलब्धता के दो मुख्य स्त्रोत हैं।

1. धरातलीय जल, 2. भूमिगत जल।

धरातलीय जल –

धरातलीय जल के अंतर्गत नदीयों, झीलों, तालों, जलाशयों के जल सम्मिलीत है। धरातलीय जल में स्थायी जल राशियॉ महत्वपूर्ण होती है।

अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध धरातलीय जल स्त्रोतों में उत्पत्ति, वार्षिक जल धारण की क्षमता, जल प्राप्ति के स्वरूप तथा जल उपयोग की दृष्टि से क्षेत्रिय विविधता पाई जाती है। कुछ जल स्त्रोतों में वर्ष पर्यन्त जल की उपलब्धता रहती है। जबकि अध्ययन क्षेत्र के अधिकांश धरातलीय जल के स्त्रोत शीत काल के पश्चात से उनके जल की मात्रा अत्यन्त अल्प हो जाती है। जल स्त्रोत स्थायी एवं अस्थायी दो प्रकार के होते है। स्थायी जल स्त्रोत के अंतर्गत हिमालय से निकलने वाली नदीयॉ तथा गहरे एवं बड़े ताल सम्मिलित है। अस्थायी जल स्त्रोत के अंतर्गत बरसाती नदीयॉ एवं नाले तथा छोटे उथले ताल एवं जलाशय सम्मिलीत है। अतः जल संसाधन के आकलन में इन सभी

जल स्त्रोतों का क्षेत्रिय अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

अ. नदी जल संसाधन, ब. तालाब एवं ताल

अ. नदी जल संसाधन –

जनपद में प्रवाहित होने वाली तीनों नदियां (घाघरा, टोंस एवं भैंसहीं) निम्न गंगा–घाघरा ओबाब में गंगा की सहायक नदियां है, जिसमें मऊ जनपद हेतु घाघरा नी सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं, जो अध्ययन क्षेत्र के 50 किलोमीटर क्षेत्र पर प्रवाहित होती है। इस नदी की बाढ़ में जल निस्तारण की क्षमता गंगा नदी की तुलना में डेढ़ गुना अधिक है। टोंस नदी मऊ जनपद की दूसरी प्रमुख नदी है, जो इस क्षेत्र पर प्रवाहित होती है। इसके अलावा अन्य मौसमी नदीयां एवं नाले हैं।

घाघरा नदी में मिलने वाले कुछ छोटे–छोटे नाले हैं, जिसमें फराई, वानई हाहा नाले प्रमुख हैं। टोंस नदी के अतिरिक्त रतनपुरा विकास खण्ड में वसनई नाला प्रसिद्व है। जनपद मऊ में प्रवाहित नदियों के प्रवाह क्षेत्र का विवरण तालिका 3.1 एवं चित्र 3.1 से स्पष्ट है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

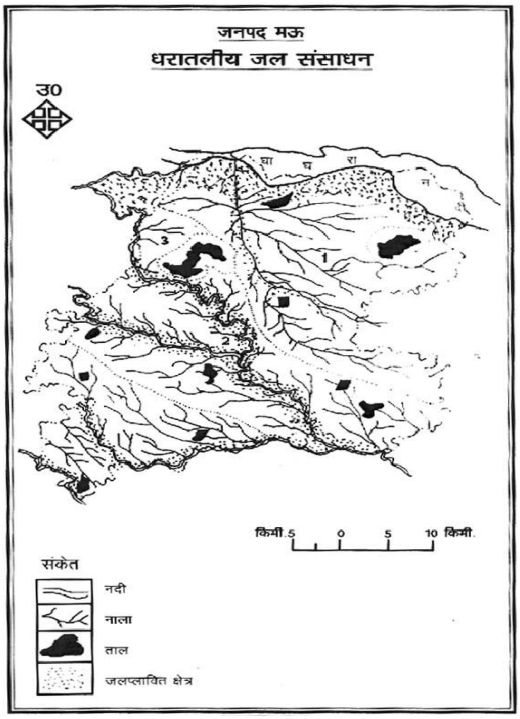

तलिका 3.1

जनपद मऊ : नदियों का प्रवाह क्षेत्र

नदी का नाम	क्षेत्र (किमी0 में)
घाघरा	50
टोंस	60
छोटी सरयू	40
अन्य	70
योग	220

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में नदियों का कुल प्रवाह 220 किलोमीटर है इसके अतिरिक्त छोटी नदियं एवं नाले भी है, जिनसे प्रवाहित जल प्राप्त होता है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

ब. तालाब एवं ताल –

नदियों के साथ–साथ अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में ताल और पोखरे भी मुख्य भूमिका निभाते हैं। इनमें रतोई ताल, नाकटी ताल, नारजा ताल, लासाह ताल, तथा वद्येला ताल प्रमुख है। इसके अलावा यहो कुछ गोखुर झीलों (तालों) का भी विकास हुआ है। जिसमें चवर एवं कोनरहीं ताल प्रमुख हैं। पूर्वी भाग में स्थित रतोई ताल सबसे बड़ा एवं गहरा ताल है, जो लगभग 2023 हेक्टेयर भूमि पर विस्तृत है।इसके ठीक उत्तर में इससे सटा हुआ चवर ताल भी स्थित हैं जो क्षेत्रफल में अपेक्षाकृत छोटा है। उत्तर–पश्चिम में स्थित लासाह ताल तथा दक्षिण–पूर्व में स्थित बद्योला ताल एक दूसरे से गोविन्दपुर के पास मिलते हैं। मध्यवर्ती उच्च भूमि के पश्चिमी भाग में कुछ ताल स्थित हैं। इस क्षेत्र के प्रमुख तालों में पकड़ी ताल तथा पिउवा ताल प्रमुख है। पकड़ी ताल का विसा एक पतली पट्टी के रूप में हुआ है। पिउवा ताल, पकड़ी ताल के दक्षिण–पश्चिम में स्थित है ये दोनों ताल एक दूसरे से सटे हुए है, जिनकी लम्बाई 10 किमी0, चौड़ाई 3 मीटर एवं गहराई लगभग 7.5 मीटर है। छोटे तालों में देवताल तथा तुलसी ताल प्रमुख हैं। देवताल की लम्बाई 1.5 किमी., चौड़ाई 1.13 मीटर एवं गहराई 4.6 है।

रतनपुरा विकास खण्ड में टोंस नदी के अतिरिक्त गाढ़ा ताल एवं ईटौराताल दो ऐसे ताल हैं, जिसमें वर्ष भर पानी भरा रहता है और इन तालों से कई छोटे–छोटे नाले निकले हैं जबकि भैंसहीं नदी की उत्पत्ति आजमगढ़ जनपद में स्थित भैंसहा ताल से हुई है, जिसके अंतगर्त बाबा ताल, भैंसाताल

तथा बाबा बनारसीदास ताल भी है। इन प्राकृतिक तालों के अतिरिक्त मत्स्य विभाग द्वारा मत्स्य पालन हेतु कृतित्र तालों का भी निर्माण किया गया है। साथ ही साथ कुछ मत्स्य पालक भी अपना निजी तालाब निर्मित किये हैं।

1. भूमिगत जल –

भूमिगत जल की मात्रा पर वर्षा की प्राप्ति एवं संरचना तथा धरातलीय स्वरूप का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न भागों के क्रमशः बालू एवं मृतिका के संस्तर मिलते हैं। बालू युक्त संस्तरों में भूमिगत जल अपेक्षाकृत अधिक प्राप्त होता है। (तिवारी, सी0 पी0, 2000)

भूमिगत जल तल : –

तीव्र ढालों एवं नदियों के किनारों पर भूमिगत जल गहराई पर मिलता है, जबकि समलत मैदानी भाग में जल तल अपेक्षाकृत ऊचां रहता है। जल तल पर प्रतिवर्ष प्राप्त वर्षा जल का प्रभाव भी पड़ता है। फलतः विभिन्न वर्षों जें जल–तल में उतार–चढ़ाव भी होता रहता है। जल–तल में मैसमी परिवर्तन भी होता रहता है। वर्षा ऋतु के समाप्ति पर जल–तल उच्च एवं वर्षा ऋतु के पूर्व निम्न रहता है, जो तालिका 3.2 से स्पष्ट है।

भूमिगत जल के बृहद भण्डार का मुख्य स्त्रोत वर्षा का जल है। जनपद में वर्षा से प्राप्त जल तालाब पोखरों एवं नालों में चला जाता है। भूमिगत जल का यह भण्डार अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्यों हेतु एक महत्वपूर्ण कारक है। यहां भूमिगत जल की सतह औसतन 15–20 फीट की गहराई पर विद्यमान है। भूमिगत जा का प्रमुख उपयोग नलकूप, कुआं तथा हैण्डपम्प द्वारा होता है।

मानसून पूर्व एवं मानसून पश्चात भूमिगत जल तल का विवरण तालिका 3.2 एवं चित्र 3.2 से स्पष्ट है।

तलिका 3.2

जनपद मऊ : भूमिगत जल तल (भू–तल से, मीटर में)

विकास खण्ड	मानसून पूर्व	मानसून पश्चात
दोहरीघाट	6.19	4.39
फतेहपुर मण्डाव	4.79	3.69
घोसी	4.57	3.15
कोपागंज	5.28	4.19
परदहां	3.63	2.67
रतनपुरा	4.89	3.71
मुहम्मदाबाद	3.75	2.65
रानीपुर	4.13	3.01

भूल–जल विभवः–

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में भू–जल विभव में क्षेत्रिय विभिन्नता देखने को मिलती है। अध्ययन क्षेत्र में शुद्व प्रतिलक्ष्य पूनर्पूरण क्षमता 82382.71 हेमी0 तथा शुद्व वार्षिक जल निकास 40328.46 हेमी0 है। विकास खण्ड स्तर पर शुद्व भू–जल पुनर्पूरण सर्वाधिक 11128.29 हेमी0 रानीपुर विकास खण्ड में एवं सबसे कम 6772.79 हेमी0 दोहरीघाट विकास खण्ड में मिलता है। शुद्व जल निकास सर्वाधिक 5773.31 हेमी0 कोपांगंज विकास खण्ड में, जबकि सबसे कम 3171.

72 हेमी0 दोहरीघाट विकास खण्ड में मिलता है। अध्ययन क्षेत्र में भू–जल विभव का विवरण तालिका 3.3 एवं चित्र 3.2 से स्पष्ट है।

तलिका 3.3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में शुद्व वार्षिक जल निकास के बाद चबचा हुआ कुल भू – जल 42052.25 हेमी0 है। विकस खण्ड स्तर पर शुद्व भू–जल पुनर्पूरण सर्वाधिक (11128.29 हेमी0), रानीपुर विकास खण्ड में एवं सबसे कम (5773.31 हेमी0) कोपागंज विकास खण्ड में, जबकि सबसे कम (3171.72 हेमी0) दोहरीघाट विकास खण्ड में मिलता है। अध्ययन क्षेत्र में भू–जल विभव का विवरण तालिका 3.3 एवं चित्र 3.3 से स्पष्ट है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

तलिका 3.3

जनपद मऊ : भू–जल विभव (2000–2001)

विकास खण्ड	शुद्व वार्षिक पुनर्पूरण (हेमी0)	शुद्व वार्षिक निकास (हेमी0)	भू जल अधिवेष (हेमी0)	भूलज विकास स्तर (प्रतिशत)
दोहरीघाट	6772.79	3171.72	3601.07	46.83
फतेहपुर मण्डाव	7619.59	3573.73	4045.86	46.90
घोसी	9299.37	5772. 25	3527.12	62.07
बड़ाराव	8163.27	4472.37	3690 .90	54 .79
कोपागंज	10463.53	5773 .31	4690.22	55.18
परदहां	9328.75	3587.71	5741.04	38.56
रतनपुरा	10172.51	5251.27	4921.24	51.62
मोहम्मदाबाद	9432.61	3253.14	6179.47	34.49
रानीपुर	11128.29	5472.96	5655.33	49.18
योग	82382.71	44328.46	42052.25	48.95

तलिका 3.3 के अवलोकन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में शुद्व वाार्षिक

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

जल निकास के बाद बचा हुआ कुल भूल जल 42052.25 हेमी0 है, जो विकासखण्ड स्तर पर सबसे अधिक (6179.47 हेमी0) मुहम्मदाबाद विकासखण्ड में एवं सबसे कम (3527.12 हेमी0) घोसी विकासखण्ड में है।

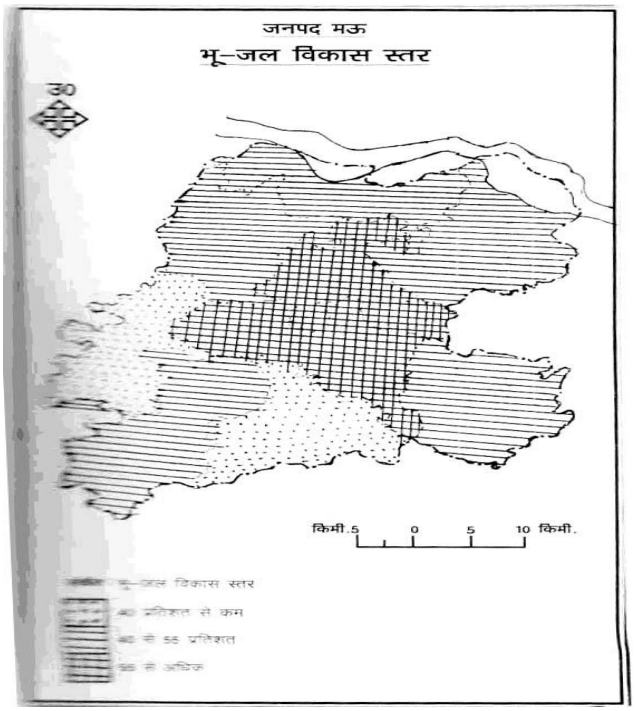

इस प्रकार वर्ष 2000–01 में मऊ जनपद में भूल जल के विकास का औसत स्तर 48.95 प्रतिशत है। विकासखण्ड स्तर पर सबसे अधिक भू–जल विकास (62.07 प्रतिशत) घोसी विकासखण्ड में है, जबकि सबसे कम (34.49 प्रतिशत) मुहम्मदाबाद विकासखण्ड में। इस तरह इस आधार पर कहा जा सकता है कि अभी अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में भूल जल विकास की कोई समस्या नही है।

उपयोग :–

जनसंख्या की खाद्य समस्या की चुनौती को स्वीकार करने हेतु कृषि उत्पादन में वृद्वि, उसके प्रसार एवं स्तर निर्धारण में जल उपयोग निर्णयक सिद्व होता है।

धरातलीय जल का उपयाोग सिंचाई, गृह कार्यों, औद्योगिक एवं जल शिक्त उत्पादन, नौ परिवहन, मत्स्य पालन तथा मनोरंजन हेतु किया जाता है, जबकि भूमिगत जल का उपयोग प्रायः पेय जल एवं सिंचाई हेतु किया जाता है।

1. सिंचाई हेतु जल का उपयोग –

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में जल संसाधन का उपयोग मुख्य रूप से कृषि कार्य में सिंचाई के लिए किया जाता है। सतहीं जल (नहर तथा तालाब) के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र के अल्प भाग में ही सिंचाई की जाती है। जबकि नलकूप, पंम्पींगसेट एवं कुओं द्वारा भूमिगत जल के उपयोग से अध्ययन क्षेत्र के व्यापक भू–भाग में सिंचाई कार्य सम्पन्न होता है।

नहरें –

अध्ययन क्षेत्र में जल संसाधन उपयोग हेतु प्रयुक्त सिंचाई में नहरों की भूमि का अत्यधिक है। इसके अंतर्गत शारदा सहायक नहर एवं दोहरीघाट पम्प नहर द्वारा सिंचाई की जाती है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के साधनों में हुई प्रगति का विवरण तालिका 3.4 से स्पष्ट है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

तालिका 3.4

जनपद मऊ : सिंचाई स्त्रोत की प्रगति

वर्ष	नहरे (किमी0में)	राजकीय नलकूपों की संख्या	बेरिंग पर लगे पम्पसेटों की सं0	निजी नलकूपों की संख्या
2000—01	391	277	15185	2388
2001—02	391	277	15593	2482
2002—03	391	277	16084	2542

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में विकास खण्डवार सिंचाई के साधनों का विवरण तालिका 3.5 एवं चित्र 3.3 से स्पष्ट है।

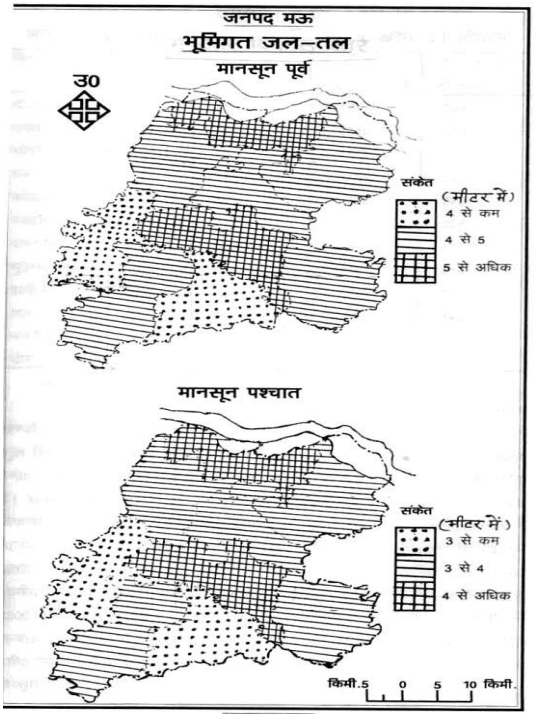

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

तालिका 3.5

जनपद मऊ : विकास खण्डवार सिंचाई के स्त्रोत का विवरण

विकास खण्ड	नहरों की ल0 (किमी0)	राजकीय नलकूपों की संख्या	बेरिंग पर लगे पम्पसेटों की सं0	निजी नलकूपो की संख्यां
दोहरीघाट	57	15	1741	234
फतेहपुरमण्डाव	47	16	2149	203
घोसी	101	16	1775	233
बड़राव	57	51	1788	238
कोपागंज	44	38	1718	275
परदहां		23	1794	204
रतनपुरा	23	31	1900	471
मुहम्मदाबाद	—	52	1096	314
रानीपुर	62	32	2123	317
योग ग्रामीण	691	274	16084	2542
नगरीय		3	—	—
योग जनपद	391	277	16084	2542

स्त्रोंत – संख्यिकीय पत्रिका, जनपद मऊ, वर्ष – 2003

अध्ययन क्षेत्र में कुल नहरों की लम्बाई 391 किमी0 है, जबकि दो विकास खण्डों परदहां एवं मुहम्मदाबाद मं नहरों की सुविधा नहीं है। नहरों

द्वारा जनपद में कुल सिंचित भूमि 15438 हेमी0 है। सबसे अधिक दोहरीघाट विकासखण्ड में (3256 हेमी0) नहरों के द्वारा सिंचाई की जाती है, जबकि नहरों की कुल लम्बाई 57 किमी0 है। सबसे अधिक नहरों का जाल घोसी विकासखण्ड में है। इसके द्वारा इस विकासखण्ड में 2360 हेमी0 भूमि पर सिंचाई की जाती है, जबकि फनेहपुरमण्डाव में नहरों की लम्बाई 47 किमी0 है जिनसे 1430 हेमी0 सिंचित भूमि को 57 किमी0 नहरों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था है। कोपागंज में 44 किमी0 नहरों के द्वारा 2500 हेमी0 भूमि सिंचित हो रहा है। रतनपुरा विकास खण्ड में कुल नहरों की लम्बाई 23 किमी0 है। इसके द्वारा 2400 हेमी0 सिंचित क्षेत्र है तथा रानीपुर 1752 हेमी0 सिंचित क्षेत्र के लिए 62 किमी0 की नहरें उपलब्ध है। सिंचित क्षेत्रफल का विस्तृत वितरण तालिका 3.6 एवं चित्र 3.4 से स्पष्ट है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

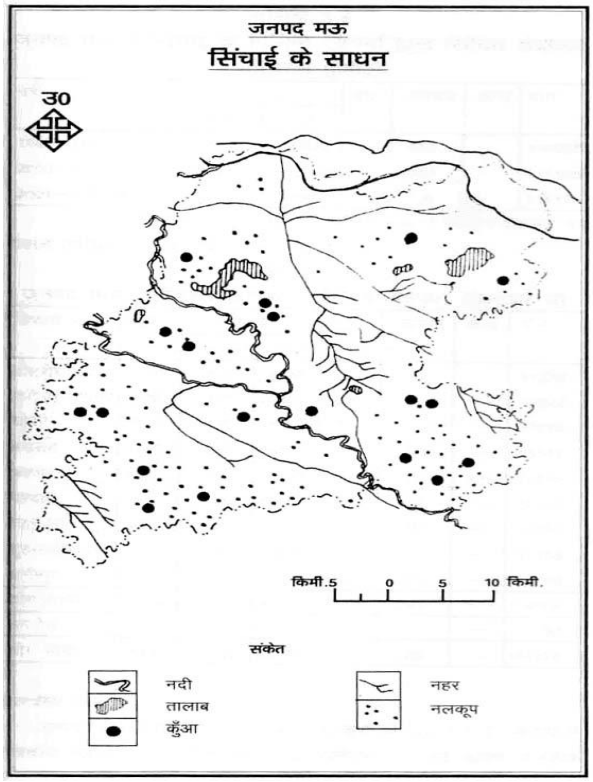

तालिका 3.6

जनपद मऊ में सिंचाई के विभिन्न साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल में परिवर्तन (हेमी0)

वर्ष	नहरें	नलकूप		कुएं	तालाब	अन्य	योग
		राजकीय	निजी				
1999—00	13577	6246	15639	1	473	—	115936
2000—01	11024	3944	100029	1	107	—	115105
2001—02	15438	1532	96449	475	280	—	114174

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में विकास खण्डवार सिंचित क्षेत्रफल का विवरण तालिका 3.7 एवं चित्र 3.5 से स्पष्ट है।

विवरण तालिका 3.7 एवं 3.5 से स्पष्ट है।

तालिका 3.7

जनपद मऊ : विकास खण्डवार सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टअर में)

विकासखण्ड	नहरें	नलकूप		कुएं	तालाब	अन्य	योग
		राजकीय	निजी				
दोहरीघाट	3256	120	7995	5	—	—	11376
फतेहपुरमण्डाव	1430	130	12342	20	—	—	13922
घोसी	2360	130	8115	50	40	—	10695
बड़राव	1740	287	9400	65	50	—	11542
कोपागंज	2500	180	10830	40	20	—	13570
परदहां	—	160	12116	35	10	—	12321
रतनपुरा	2400	170	11050	70	60	—	13750
मुहम्मदाबाद	—	190	9878	60	30	—	10158
रानीपुर	1752	165	14633	130	70	—	16750
योग ग्रामीण	15438	1532	96359	475	280	—	114084
नगरीय	—	—	90	—	—	—	90
योग जनपद	15438	1532	64449	475	280	—	114174

राजकीय नलकूप – अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में राजकीय नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र 1532 हेक्टेअर है। सबसे अधिक राजकीय नलकूपों का विकास मुहम्मदाबाद विकास खण्ड में हुआ है। इस विकास खण्ड में 52 नलकूप है लेकिन इसके द्वारा 190 हेक्टेअर भूमि की सिंचाई की जाती है। राजकीय नलकूपों का विकास सभी विकास खण्डों में हुआ है। सबसे कम राजकीय नलकूप का विकास दोहरीघाट विकास खण्ड में हुआ है। यहां पर राजकीय नलकूपों की संख्या 15 है इसके द्वारा सिंचित भूमि 120 हेक्टेअर है। इसी तरह फतेहपुरमण्डाव में राजकीय नलकूपों की संख्या 16 है जिसके द्वारा सिंचित भूमि 130 हेक्टेअर है। यही हालात विकास खण्ड घोसी का है सिजमें भी राजकीय नलकूपों की संख्या 16 है। तथा यहां पर भी सिंचित भूमि 130 हेक्टेअर है। कोपागंज विकास खण्ड में कुल राजकीय नलकूपों की संख्या 38 है तथा इसके द्वारा कुल सिंचित भूमि 180 हेक्टेअर है। परदहां विकास खण्ड के अंतर्गत कुल राजकीय नलकूप 23 आते है। जिसके द्वारा 160 हेक्टेअर क्षेत्र की सिंचाई की जाती है। रतनपुरा विकास खण्ड में राजकीय नलकूपों की संख्या 31 है जिसके अंतर्गत 170 हेक्टेअर सिंचित क्षेत्र है। जबकि विकास खण्ड बड़राव के अंगर्तत कुल राजकीय नलकूपों की संख्या 51 है और इससे 287 हेक्टेअर सिंचित क्षेत्र प्रयोग में लाया जाता है तथा रानीपुर विकास खण्ड मे कुल राजकीय नलकूपों की संख्या 32 है और इनके अंतर्गत 165 हेक्टेअर सिंचित क्षेत्र है। अतः अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत कुल राजकीय नलकूपों से अधिकतम सिंचित क्षेत्र प्रयोग में है।

Airo International Research Journal
Volume XII, ISSN: 2320-3714
August 2017
Impact Factor : 0.75 to 3.19
UGC Listed (Approved Number Number 63012)

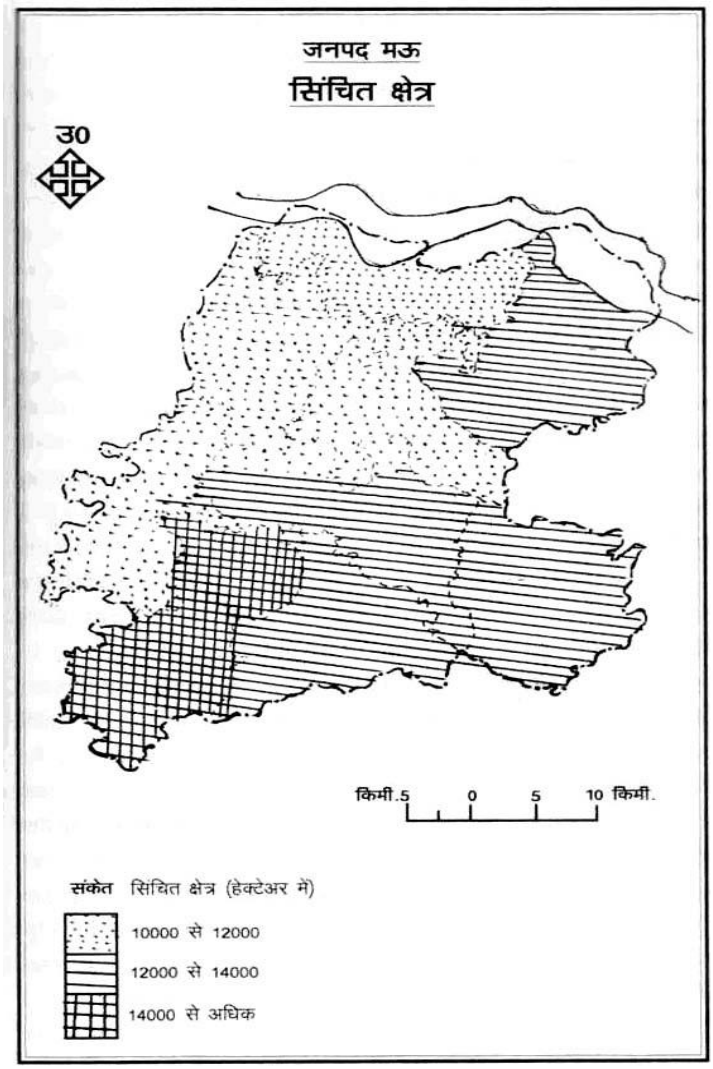

निजी नलकूप –

अध्ययन क्षेत्र मऊ के अंतर्गत निजी नलकूप के माध्यम से अधिकतम भूमि की सिंचाई की जाती है। राजकीय नलकूप से 1532 हेक्टेअर भूमि की सिंचाई की जाती है, जबकि निजीनलकूप द्वारा 96449 हेक्टेअर भूमि की सिंचाई की जाती है। इस तरह राजकीय नलकूपों की अपेक्षा निजी नलकूपों से 94917 हेक्टेअर अधिक भूमि की सिंचाई की जाती है। निजी नलकूप के द्वारा

सबसे अधिक रानीपुर विकास खण्ड में सिंचाई की जाती है। तथा सबसे कम विकास खण्ड दोहरीघाट में (7995 हेक्टेअर) भूमि सिंचित की जाती है, जबकि फतेहपुरमण्डाव में निजी नलकूपों की संख्या 203 है और यहां पर 12342 हेक्टेअर भूमि सिंचित की जाती है।

अन्य स्त्रोत –

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में अन्य स्त्रोत के अंतर्गत आने वाले विभिन्न साधनों में कुएं भी है, जिससे 475 हेक्टेअर सिंचित क्षेत्र की सिंचाई की जाती हैं। विकास खण्ड दोहरीघाट में 5 हेक्टेअर, फतेहपुरमण्डाव में 20 हेक्टेअर, घोसी में 50 हेक्टेअर, बड़राव में 65 हेक्टेअर, कोपागंज में 40 हेक्टेअर, परदहां में 35 हेक्टेअर, रतनपुरा में 70 हेक्टेअर, मुहम्मदाबाद में 60 हेक्टेअर और रानीपुर में विकास खण्ड में कुल 130 हेक्टेअर भूमि की सिंचाई कुओं से की जाती है।

सिंचाई के स्त्रोत में बोरिंग पर लगे पम्प सेट भी आते हैं, जिसकी संख्या 2002–03 के अनुसार 16084 है। विकासखण्डों कें अंतर्गत आने वाले पम्पसेटों की संख्या दोहरीघाट में 1741, फतेहपुरमण्डाव में 2149 , घोसी में 1775, बडराव में 1788, कोपागंज में 1718, परदहां में 1794, रतनपुरा में 1900, मुहम्मदाबाद में 1096 एवं रानीपुर में 3123 है। अध्ययन क्षेत्र में सिंचन हेतु और अधिक जल की तथा सिंचाई के साधनों की आवश्यक्ता है, क्योंकि यहॉ शुद्व कृषिगत भूमि अधिक है।

1. गृहाकर्य में जल का उपयोग –

ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में गृह कार्य हेतु जल के उपयोग की मात्रा में अंतर पाया जाता है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण एवंज ल संस्थान द्वारा प्राप्प आकड़ो के अनुसार नगरों में ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन अधिक जल का उपयोग होता है। अध्ययन क्षेत्र के नगरों एवं कस्बों में प्रति व्यक्ति 40–80 लीटर जल का उपयोग होता है, जिसमें 25 प्रतिशत स्नान हेतु, 16 प्रतिशत बर्तन की सफाई, 12 प्रतिशत खाना बनाने में तथा शेष पीने एवं अन्य कार्यों में प्रयुक्त होने का लगभग अनुमान लगाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन गृह कार्य के लिए जल उपयोग की मात्रा औसतन 30–60 लीटर है। जिनमें खाना बनाने में 20, प्रतिशत, स्नान हेतु 20 प्रतिशत, वस्त्रों की सफाई में 18 प्रतिशत, शौचालय के लिए 2 प्रतिशत तथा 30 प्रतिशत पालतु पशुओं तााि शेष अन्य गृहकार्य हेतु प्रयुक्त होता है। जल के उपयोग में ऋत्विक विज्ञिन्नता मिलती है। शीत ऋतु की अपेक्ष्ज्ञा ग्रीष्म ऋतु में स्नान तथा पेय जल के लिए अधिक जल का उपयोग क जाता है। (तिवारी, बृहेश कुमार, 2002)

2. पीने हेतु जल का उपयोग–

अध्ययन क्षेत्र मऊ में सभी विकास खण्डों में प्र्याप्त मात्रा में पेयजल उपलब्ध है सबसे अधिक पेयजल की सुविधा रनीपुर ब्लाक में है। यहां कुल 257 सरकारी नल/हैण्डपम्प की उपलब्धि है। इस ब्लाक में 154247 जनसंख्या इस जल ंसाधन का उपभोग करती है। सामान्यतया तथा सभी ब्लाकों में पेयजल सुविधा पर्याप्त होने के कारण यहां जनसंख्या घनी बसी हुई है। सबसे कम पेयजल संसाधन परदहां में है, जहां कुल 111 सरकारी नल/हैण्डपम्प उपलब्ध हैं। इस विकासखण्ड में 127842 जनसंख्या इस जल संसाधन का उपभोग करती है। उपर्युक्त तालिका 3.8 से स्पष्ट है कि विकासखण्ड में पर्याप्त मात्रा में पेयजल संसाधन उपलब्ध है।

तालिका 3.8

जनपद मऊ : विकास खण्डवार पेयजल सुविधा, 2002–03

विकास खण्ड	नल/हैण्डपम्प	
	संख्या	जनसंख्या
दोहरीघाट	147	128672
फतेहपुरमण्डाव	190	151268
घोसी	154	104958
बड़राव	141	127877
कोपागंज	133	140666
परदहां	111	127842
रतनपुरा	156	120991
मुहम्मदाबाद	183	145266

श्रानीपुर	257	454247

1. जल का औद्योगिक विकास में उपयोग –

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ में जल का औद्योगिक उपयोग खास तौर से चीनी मिल, सूती मिलों एवं लद्यु तथा कुटीर उद्योग के रूप में विकसीत चर्म उद्योग, बर्फ निर्माण, बेकरी, डेयरी, प्लास्टिक, कत्था, कालीन, दरी तथा रंगाई–छपाई आदि में होता है। एक ऑकलन के अनुसार घोसी में स्थित चीनी मिल में लगभग 2500 से 3000 घनमीटर वार्षिक जल का उपयोग होता है। यहां स्थापित डिस्टीलरी में भी जल का पर्याप्त उपयोग होता है।

2. **नौ परिवहन–**

प्राचीन काल में सर्व प्रमुख, परन्तु वर्तमान समय में परिवहन का साधन जल परिवहन है। नौका परिवहन जनपद की दो प्रमुख नदियों टोंस एवं घाघरा में अब भी होता है, परंतु इसका उपयोग यात्रियों को आवागमन हेतु नहीं अपितु कुछ व्यापारिक सामानों जैसे बालू, लकड़ी अनाज, मछली पकड़ने आदि के लिए किया जाता है। इस प्रकार जनपद मऊ में जल परिवहन का विस्तार बहुत ही कम है तथा नौका परिवहन केवल नाम मात्र का ही होता है।

2. मत्स्य पालन एवं मनोंरंजन–

अध्यय क्षेत्र की नदियों एवं तालों क`जल का उपयोग प्राचीनकाल से ही मत्स्य पालन के लिए होता आ रहा है। क्षेत्र के मांसाहारी व्यक्तियों के भोज्य पदार्थों में मछली का प्रमुख स्थान है। मत्स्याखेट, मनोरंजन का भी एक साधन

है। मनोरंजन के रूप में कुछ नदियां एवं तालों में नौकायन, मत्स्याखेट तथा विशेष पर्वों, स्नान आदि के रूप में जल का उपयोग होता है। नगरीय क्षेत्रों में पार्कों, उद्यानों तथा खेलके मैदानों में रख–रखाव एवं फब्बारों आदि के लिए अल्प मात्रा में जल का उपयोग होता है।

जल संसाधन का दुरूपयोग एवं उससे उत्पन्न समस्याएं :–

जल संसाधन के दुरूपयोग की समस्या कोई नई समस्या नहीं है। कारण कि आदि काल से ही मानव अपशिष्ट पदार्थों को जल स्त्रोतों में विसर्जित करता चला आ रहा है, किन्तु वर्तमान समय में तीव्र औद्योगिकरण, जनसंख्या, वृद्वि, जल स्त्रोतों का दुरूपयोंग, वर्षा की मात्रा में कमी आदि मानवकृत एवं प्राकृतिक कारणों स`जल प्रदूषण की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया हैं।

इस प्रकार मानव के विभिन्न क्रियाकलापों से जब जल के रसायनिक, भौतिक एवं जैविक गुणों में ह्रास आ जाता है, तो ऐसे जल को प्रदूषित जल कहा जाता है। स्पष्ट है कि जब जल की भौतिक, रसायनिक अथवा जैविक संरचना में इस तरह का परिवर्तन हो जाता है कि वह जल किसी प्राणी की जीवित दशाओं के लिए हानिकारक एवं अवांछित हो जाता है तो जल प्रदूषित जल कहलाता है। (पाठक, गणेश कुमार, 2003)

विभिन्न उद्योगों के अपशिष्ठ पदार्थों, नगरों के अपशिष्ठ जल, अवमल एवं विभिन्न प्रकार के कूड़ा–कचरा के परिणामस्वरूप क्षेत्र का जल प्रदूषित हो

रहा है। प्रत्येक चीनी मिलों में लगभग 25000 घनमीटर अपशिष्ठ जल निकलता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न उद्योगों के अपशिष्ठ जल से स्थानीय जल प्रदूषित हो रहा है। इस प्रदूषित जल से मृदा उत्पादकता में ह्रास तथा पशुओं एवं अन्य जीवों में अनेक बीमारियां फैलती हैं, मानव स्वास्थ्य के लिए भी दुर्गन्धपूर्ण जल हानिकारक है।

नगरों के अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में भी जल प्रदूषण की समस्या है। अध्ययन क्षेत्र के कुछ भागों के निवासी अब भी नदियों, झीलों के जल का उपयोग पेयजल के रूप में करते हैं। पशुओं एवं पेड़–पौधों की पत्तियों तथा अन्य प्रकार के कूड़ा–करकट से भी जल प्रदूषित होता रहता है।

जल संसाधन के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में जल संसाधन उपलब्ध है, किन्तु इसके वितरण एवं वर्ष के प्रत्येक महीने में उसकी उपलब्धता में विभिन्नता मिलती है। साथ ही साथ अध्ययन क्षेत्र के प्रत्येक स्थानों पर शुद्व जल उपलब्ध नहीं है। कभी जल की अधिक मात्रा से क्षेत्र जल प्लावित होता रहता है तथा कभी जलाभाव से सूखा भी पड़ता रहता हैं।

जल संसाधन संरक्षण :–

जल संसाधन संरक्षण से तात्पर्य जल के सभी स्त्रोतों का समुचित विकास कर अधिक से अधिक समय तक इसे उपयोग बनाना है। जनपद में जल का मुख्य उपयोग पीने के अलावा सिंचाई हेतु होता है। अध्ययन क्षेत्र में

सतहीं एवं भूमिगत जल के रूप में जल संसाधन का आपार भण्डार मौजूद है। वर्ष 2001–02 में जनपद में सिंचित क्षेत्र 1.14 लाख हेक्टेअर एवं सकल सिंचित क्षेत्र 1.52 लाख हेक्टेअर रहा। इस प्रकार वर्ष 2001–02 में जनपद में सिंचाई आच्छादन 88.9 प्रतिशत एवं सिंचाई गहनता 133.22 रही। इन आकड़ों से स्पष्ट है कि वर्ष 2001–02 के अन्त तक जनपद में शुद्व बोये गये क्षेत्र के 11. 14 प्रतिशत अंश के लिए सिंचन सुविधाएं सुलभ नही थी। अतः जल संसाधन का समुचित प्रबन्धन करते हुए शतप्रतिशत सिंचाई क्षमता को प्राप्त करना होगा। जनपद में फैली नहरों को पानी देने की व्यवस्था को नियमित एवं चुस्त दुरूस्थ बनाना होगा और नहरों के टेल तक पानी पहुॅचाना सुनिश्चित करना होगा। बन्द राजकीय नलकूपों को चालू करके और ग्रामीण क्षेत्रों में नियमित विद्युत आपूर्ति करके, व्यक्तिगत नलकूपों का और अधिक विस्तार करके शतप्रतिशत सिंचाई क्षमता हासिल की जा सकती है।

मऊ जनपद प्रायः जल जमाव से प्रभावित रहता है। जनपद के निम्न भूमि वर्षा ऋतु में प्रायः जल से भर जाती है और वर्षा ऋतु के समाप्ती के बाद भी यह जल काफी दिनों तक सुख नही पाता है। जिससे रबी की फसल की बुवाई प्रभावित होती है। इसके लिए कुछ बडे जल जमाव वाले क्षेत्रों स`जल निकासी हेतु नाले का निमार्ण करना अधिक हितकर होगा। नाले का निर्माण निम्न भूमि से लेकर नदीयों के जल ग्रहण क्षेत्रों की तरफ होना चाहिए। ईट भटठों के समीप मिट्टी के उत्खनन के कारण वर्षा ऋतु में जल जमाव के कारण कृतिम तालाब का निर्माण हो जाता है। इन तालाबों के किनारे उॅची

मेड बन्दी करके मत्स्य पालन करना श्रेयकर होगा। तालबों एवं अधिक दिनों से जल जमाव से ग्रस्त रहने वाले क्षेत्रों में मत्स्य पालन एवं सिघाडा का उत्पादन करना लाभदायक सिद्व होगा।

अतः अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ के जल संसाधन संरक्षण हेतु व्यापक स्तर पर निती तैयार करने की आवश्यकता है, जिससे क्षेत्र के प्रत्येक भाग में वर्ष पर्यन्त विभिन्न उपयोगों के लिए आवश्यक मात्रा में जल उपलब्ध होता रहे।

वन संसाधन –

वन प्रकृति प्रदत ऐसा संसाधन है, जो मानव जीवन की प्रगति एवं संमृद्वि में सदैव से सहायक होता आया है। वन संसाधन में कृषि, व्यवसाय, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास सम्भव है। इससे इंधन तथा इमारती लकड़ी, शहद, मोम, विविध जड़ी–बूटी तथा विभिन्न उद्योगों के लिए कच्चे पदार्थ प्राप्त होते है। पर्यावरण को शुद्व करने में भू–अपरदन, भू–स्खलन तथा जल प्लावन को रोकने में वनों का महत्वपूर्ण योगदान है। वन के विविध उपयोग के परिणाम स्वरूप क्षेत्र में अनवरत वन विदोहन होता रहा है। अध्ययन क्षेत्र में वनों की संख्या बहुत ही कम है, जबकि पारिस्थितिकीय संतुलन हेतु किसी भी क्षेत्र में समान्यतः 33 प्रतिशत भूमि का वनाच्छादित होना स्वीकार किया गया है, जो कि बहुत जरूरी है। प्रागैतिहासिक काल में अधिकांश मैदानी भाग वनाच्छादित था जिससे आदिम जातियॉ वनोत्पाद पर जीवन निर्वाह करती थी। आर्यों के योगदान के पश्चात् ही कृषि कार्य में गति आई जिसके फलस्वरूप वनाच्छादित क्षेत्र का क्रमशः ह्रास होता गया है। वन विभाग के कूपरिणामों से

लोग प्राचिन काल में ही अवगत हो गये थें। इसका प्रमाण कौटिल्य का अर्थ शास्त्र (300 ई0पू0) है। जिसमें वन एव जिवों के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित किया गया था। वनों की कटाई मध्य कालीन युग में भी अवैध रूप से चलती रही है, जो वर्तमान काल में अपनी चरम सीमा पर पहुॅच गई है। गत कुछ दशकों से विषेशकर स्वतन्त्रता के पश्चात वन संरक्षण की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित हुआ जिसके फलस्वरूप वनों का ह्रास अंशतः रूक गया है। (तिवारी, बृजेश कुमार, 2002, पृ01)

उपलब्धता –

सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र प्राचिन काल में वनों में आच्छादित था, जिससे कालान्तर में मानव ने नष्ट करके अपने आश्रय स्थल में परिवर्तीत कर दिया, जिसके परिणाम स्वरूप यहां के जंगल पूर्णतः समाप्त हो गये। यहां केवल छिट–पुट रूपों में ही उद्यानों एवं बाग, बागिचों के रूप में विभिन्न प्रकार के वृक्ष मिलते है। जनपद में वन मात्र 560 हेक्टेअर पर विस्तृत है, जो राष्ट्रीय मानक संपूर्ण भौगोलिक क्षेत्रफल से 33.33 प्रतिशत के सापेक्ष मात्र 0.32 प्रतिशत है। पर्यावरण की सुरक्षा, भू–क्षरण, अल्प वर्षा, भूमी की अंदूरीनी आद्रर्ता में कमी जैसी अनेक समस्याएं दूर करने हेतु वनीकरण की आवश्यकता है। वर्ष 2001–02 में जनपद में 16.788 लाख पौधे लगाये गये। इसके अतिरिक्त नगरीय क्षेत्रों में भी व्यापक वृक्षा रोपण का कार्यक्रम संचालित किया गया। जनपद में वन क्षेत्र बढाये जाने के उद्देश्य से रेलपथ तथा नहरों के किनारे–किनारे एवं निर्वनीकृत क्षेत्रों में अधिक से अधिक पौधों के रोपण का

कार्यक्रम चलाया जा रहा है। जनपद में वनदेवी स्थित पौधशाला द्वारा निःशुल्क छायादार एवं फलदार पौधों का वितरण और तत्संबंधित गोष्टी एवं प्रशिक्षण द्वारा वृक्षारोपण हेतु व्यापक अभियान चलाया जा रहा है, जो एक सराहनीय कदम है।

उपयोग एवं समस्याएँ –

वनों का उपयोग विविध प्रकार से होता है, जिसमें इमारती एवं ईधन की लकड़ी का उत्पादन एवं उपयोग प्रमुख है। वनों के गौड़ उत्पादन में मधु, मोम, गोंद तथा जड़े आदि हैं। यद्यपि अध्ययन क्षेत्र में अपेक्षाकृत अधिक होता है।

वन रूपी प्राकृतिक सम्पदा किसी भी क्षेत्र के विकास की मुख्य आधार सम्पदा मानी जाती है। वर्षा की मात्रा और वितरण ही किसी क्षेत्र में पायी जाने वाली वनस्पति का निधारण करते हैं। प्राकृतिक वनस्पतियॉ झाडियों, घास के मैदानों अथवा वनों के रूप में मिलती है। 100 से 200 सेमी0 वर्षा वाले भागों में मानसूनी वन होते हैं, जिनकी चौड़ी पत्तियां ग्रीष्म ऋतु में सूख जाती है, किन्तु वर्षा काल के आरम्भ में ही इनमें फल और पत्तियां निकल आती हैं। ये वन अधिक खुले क्षेत्रों में पाये जाते हैं। अध्ययन क्षेत्र में वन क्षेत्रों का अभाव है। सबसे कम रतनपुरा विकासखण्ड में 0.71 प्रतिशत भूमि पर वन क्षेत्र का विस्तार है। जनपद के बड़राव विकास खण्ड में वनों का पूर्णतया आभाव परिलक्षित होता है। जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों में कुल उपयोग की जाने वाली भूमि के 0.33 प्रतिशत भाग पर ही वनों की उपलब्धता है, जबकि नगरीय क्षेत्रों में वनों का पूर्णतया आभाव है।

समसयाएं –

प्राचीनकाल से ही मानव ने प्राकृतिक वनस्पतियों को काटकर कृषि कार्य प्रारम्भ किया था। गत शताब्दी में वन विनाश अत्यधिक हुआ। परिणामस्वरूप बाढ़ की समस्या बढ़ी तथा मृदा अपरदन में भी वृद्वि हुई हैं। वनों की अंधाधुंध कटाई, वनों में आग लगना, अनियंत्रित पशुचारण, कीड़े–मकोड़े तथा बीमारियों का प्रकोप आदि वनों की प्रमुख समस्याएं है, जिसके रोकथाम हेतु वन संरक्षण आवश्यक है। मानव द्वारा क्षेत्र के वनों का अत्यधिक शोषण हुआ है, जिसकी तुलना में आरोपण, संवर्द्वन एवं संरक्षण कम हुआ है। वन संसाधन अत्यधिक सूख्ख एवंज ल प्लावन भू–अपरदन, विभिन्न लताएं एवं पराश्रयी पौधों वन्य एवं पालतु पशु आदि से भी कुप्रभावित होते है।

वन संसाधनों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि क्षेत्र में वनों के अंतर्गत और अधिक क्षेत्र को सम्मिलित करना होगा। इसके लिए उर्वरक, उन्नत शील बीजों एवं सिंचाई की सुविधा में वृद्वि करनी होगी, जिससे कम कृषि क्षेत्रों पर अधिकतम उत्पादन किया जा सके तथा अल्प उर्वर क्षेत्रों में वनारोपण किया जाए। वृक्ष रोपण एवं संरक्षण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। वन जीवों के संरक्षण एवं संवर्धन की भी आवश्यकता है। स्पष्ट है कि वन संसाधनों का विवके पूर्ण उपयोग एवं संरक्षण क्षेत्र के समग्र विकास में सहायक है।

मृदा संसाधन–

मृदा संसाधन कृषि आधारित जनसंख्या की रीड़ होती है एवं कृषि प्रधान क्षेत्रों में जनसंख्या के घनत्व तथा मृदा उर्वरता में घनीष्ठ संबंध पाये जाते है। (सिंह, बी.बी, 1987)

पारिभाषिक संदर्भ में यह भू–पृष्ट पर मिलने वाले सुसंगठीत पदार्थ की वह उपरी परत है जो मूल भूत चट्टों एवं वनस्पतियों के योग से बनती है। प्राकृतिक संसाधनों में मिट्टी एक आधारभूत संसाधन है। जिस पर वनस्पति पशु एवं मानव सभी का अस्तित्व निर्भर करता है। जैव सूची स्तम्भ में शीर्ष पर मनुष्य, मनुष्य के निचे पशु, पशु के निचे पौधे, पौधे के निचे जीवाणु एवं सबसे निचे आधार स्वरूप मिट्टी को प्रदर्शीत किया गया है। अर्थात् आधार से शिर्ष तक क्रमानुशार सभी एक दूसरे पर निर्भर होते है। समुन्नत कृषि का विकाश इसलिए आवश्यक है कि इससे मनुष्य की सबसे बड़ी और प्रथम आवश्यकता भोजन की आपूर्ती होती है। कृषि विकास का सीधा संबंध मिट्टी एवं उसकी उवरर्ता से है। मिट्टी ऐसे संसाधन है जिसका प्रतिस्थापन संभव नही है। किन्तु वैज्ञानिक तकनीकों की सहायता से इसकी उत्पादनशीलता में संसोधन एवं परिष्कार संभव है। (सिंह, मृदुला, 2003)

मुदा प्राकृतिक संसाधनों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। पृथ्वी तल पर पाये जाने वाला समस्त जीवन ही मृदा पर निर्भर करता है। मनुष्य की सभी प्राथमीक आवश्यकताऍ मिट्टी से ही पूर्ण होती है। समस्त प्राणीयों का भोजन मिट्टी से ही प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राप्त होता है। मानव के वस्त्र तथा आवास की आवश्यकताऍ भी मिट्टी से ही पूर्ण होती है। व्यवहारिक रूप से

मनुष्य की सभी आर्थीक क्रियाएॅ मिट्टी पर ही आधारित है। इसलिए यदि कहा जाए कि मानव मिट्टी का वरद पुत्र या संतान है तो अतिशयोक्ति न होगा। (सिंह, उर्मिलेश, 2002, पृ054)

पृथ्वी तल पर कृषि उत्पादन प्रत्यक्ष रूप से मिट्टी पर ही आधारित है। पशु पालन तथा वन उद्योग भी परोक्ष रूप से मिट्टी पर ही आधारित है। मिट्टी द्वारा उत्पादन के व्यवसायों में विश्व की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या लगी हुई है। मानव का अर्थिक विकास किसी न किसी रू‍प में मिट्टी पर ी आधारित है। इस प्रकार से किसी राष्ट्र की मृदा उसकी सबसे मूल्यवान धरोहर होती है। परन्तु मनुष्य के विध्वन्सकारी प्रवृत्ति के दुष्परिणामों के फलस्वरूप मृदा की नैर्गिक उत्पादन क्षमता क्षीण होती जा रही है। खाद्याान आपूर्ति की समस्या ने लोगों को मृदा क्षरण के प्रति जागरू‍ बनाया है तथा प्रायः सभी राष्ट्र मृदा संसाधन के संरक्षण हेतु विभिन्न प्रयास कर रहे हैं।

मृदा मूल चट्टानों एवं धरालतीय संरचना पर जलवायु एवं जैविक पदार्थों की सम्मिलित प्रतिक्रिया का प्रतिफल है। यह खनिज एवं जैविक तत्वों का प्राकृतिक सम्मिश्रण है। मृदा के मुख्य पोषक तत्व नाइटोजन, कैल्शियम, फास्फोरस तथा पोटैशियम है जिसमें इसको उर्वरा शिक्त मिलती है। खनिजों के अतिरिक्त जैव पदाार्थं का भी मृदा निर्माण में अधिक महत्व होता है। विविध खनिजों के साथ मिलकर जैव पदार्थ अपनी विघटन प्रक्रिया में जैव अम्ल प्रदान करते है, जो मृदा की उर्वरता को बढ़ा देते हैं। जैव पदार्थों का मृदा के कणों के मध्य संरधता एवं उनके संगठन को कृषि योग्य बनाने में महत्वपूर्ण

भूमिका अदा करते हैं। फलस्वरूप मृदा में जल को अवशोषित कर जल संग्रह करने की क्षमता में वृद्वि होती है।

इस प्रकार भौतिक, रसायनिक, जैविक और सांस्कृतिक कारकों की क्रियाओं और प्रतिक्रीयाओं द्वारा मिट्टी की रचना पूर्ण होती हैं। मिट्टी एक गतिशील जीवित तथ्य है।

मिट्टी की उत्पत्ति में जलवायु का प्रभाव इतना महत्वपूर्ण होता है कि एक जलवायु के प्रदेश में विभिन्न प्रकार के शैलों से बनने वाले मिट्टीयां दीर्घकाल में सब एक प्रकार की होती हैं।

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ एक कृषि प्रधान जनपद है। जनपद की कुल कार्यशील जनसंख्या की 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है। प्राचीनकाल से ही मिट्टी का गुण जनसंख्या के वितरण एवं घनत्व को प्रभावित करता रहा है तथा वर्तमान में भी इस क्षेत्र के जनसंख्या के वितरण प्रतिरूप को व्यापक रूप से प्रभावित कर रहा है। निम्न गंगा–घाघरा दोआब में मिला सम्पूर्ण मऊ जनपद में घाघरा एवं उनकी सहायक नदियों द्वारा लायी मिट्टीयों का निक्षेप पाया जाता है। मिट्टीयों का यह निक्षेप अति प्राचिनकाल से ही हो रहा है और यह आज भी अनवरत जारी है। नदियों ने समय–समय पर अपने प्रवाह मार्ग में परिवर्तन किया है। कहीं–2 मिट्टीयों में नाइट्रोजन, हयूमस एवं फास्फोरस की मात्रा की पर्याप्तता के कारण मिट्टयां अधिक उपजाऊ हो गयी है, तो कहीं–कहीं मिट्टियों में सोडियम एवं लवण की मात्रा अधिक हो जाने के कारण यह मिट्टी उसर मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो

गयी है।

अतः यह स्पष्ट है कि प्राकृतिक संसाधनों में मिट्टी एक आधारभूत संसाधन है, जिस पर वनस्पति, पशु एवं मानव सभी का अस्तित्व निर्भर है।

मृदा के प्रकार–

मृदा वैज्ञानिकों ने मिट्टियों का वर्गीकरण कई आधारों पर किया है–

1. मूल चट्टानों के अनुसार – ग्रेनाइट मिट्टियां, लावा मिट्टिया, चूने की मिट्टियां आदि।
2. भ–स्थिति के अनुसार – अवशिष्ठ मिट्टियां, परिवाहित मिट्टियां, नदियों द्वारा जमा की गयी कॉप मिट्टियॉ, ग्लेशियर की मिट्टियां इत्यादि।
3. रंग के अनुसार – भूरी, कत्थई, पीली, लाल, काली, मिट्टियां इत्यादि।
4. वातावरण के अनुसार – पर्वतीय, मैदानी, मरूस्थलीय, समुद्री मिट्टियां इत्यादि।
5. कणों के अनुसार – रेतीली, दोमट, सिल्ट, चिकनी मिट्टियां, अम्लीय, क्षारीय मिट्टियां आदि।
6. जलवायु एवं वनस्पति के अनुसार – नई मिट्टियां, परिपक्व मिट्टियां और वृद्व मिट्टियां। परिपक्व मिट्टियों के क्षेत्र सघन आबाद होते हैं।

अध्ययन क्षेत्र की मिट्टी को कणों की बनावट रंग, उर्वरता, रसायनिक

संरचना, जल ग्रहण करने की क्षमता आदि के आधार पर छह भागों में विभाजित किया गया है, जो पूर्व प्रस्तुत अध्याय 2 के चित्र 6 से स्पष्ट है–

1. बलुई दोमटी मिट्टी।
2. बलुई मिट्टी।
3. चीका प्रधान दोमट मिट्टी।
4. दोमट मिट्टी।
5. चीका मिट्टी।
6. क्षार एवं लवणयुक्त मिट्टी।

1. बलुई दोमट मिट्टी–

यह मिट्टी जनपद के उत्तरी भाग में घाघरा एवं टोंस नही के कक्षारी क्षेत्रों में एक पतली पट्टी के रूप में मिलती है। इसे बालुकामय कांप मिट्टी भी कहते हैं। इस मिट्टी में 66 प्रतिशत सिल्ट, 16 प्रतिशत बालू और 6 प्रतिशत अन्य जैविक पदार्थ मिलते हैं। इसमें जल धारण करने की क्षमत कम होती है, क्योंकि इस प्रकार की मिट्टीयों में चिकनी मिट्टी की मात्र कम होती है। प्रति वर्ष घाघरा नदी द्वारा प्रति वर्ष इस मिट्टी के क्षेत्र में व्यापक अपरदन एवं निक्षेपण का कार्य किया जाता है। इसलिए यहां की मिट्टी संगठीत नहीं है। इस क्षेत्र में रबी की कृषि की जाती है।

2. बलुई मिट्टी–

बलुई मिट्टी, बलुई मिट्टी के दक्षिणी भाग में विस्तृत है। इस मिट्टी में रेत की मात्रा 70 से 90 प्रतिशत तक पायी जाती है। बलुई दोमट मिट्टी की

अपेक्षा यह मिट्टी कुछ पुरानी है। इस मिट्टी पर बाढ़ का प्रभाव भी अपेक्षाकृत कम पड़ता है। ये क्षेत्र अपेक्षाकृत न्यून उत्पादन के क्षेत्र माने जाते है। सामान्यतया इस क्षेत्र में दों फसली कृषि की जाती है। इस क्षेत्र में बाढ़ की सुरक्षा हो जाने से उत्पादकता में वृद्वि हुई है। इस क्षेत्र में कहीं–2 सफेद बालू के टीलें भी पाये जाते हैं।

3. चीका प्रधान दोमट मिट्टी –

यह मिट्टी ऊपरी बांगर के मैदानी क्षेत्र में स्थित तालों में छिटपुट रूप से पायी जाती है। इस मिट्टी का रंग हल्का भूरा एवं पीलापन लिए हुए होता है। इसमें जलोढ़ की मात्रा 20 प्रतिशत होती है। इस मिट्टी में अन्य जैविक पदार्थों की मात्रा अधिक होती है। इस क्षेत्र में जल का सतह वर्षा के मौसम में सतह पर या सतह के नजदीक पाया जाता है, जो कि गर्मी में तीन मीटर नीचे तक चला जाता है। यहां पर देर से पैदा होने वाली धान की बोवाई की जाती है।

4. दोमट मिट्टी–

अध्ययन क्षेत्र की उच्च भूमि में दोमट मिट्टी की बहुलता है। चूंकि इस मिट्टी में बालू और चिकनी मिट्टी का अनुपात लगभग समान होता है, इसलिए भारतीय भाषा में इस मिट्टी को दोरस मिट्टी के नाम से भी जाना जाता है। इसमें 43 प्रतिशत जलोढ़, 12 प्रतिशत बलुई, तथा 3 प्रतिशत अन्य जैविक पदार्थ होते हैं। इसमें जीवाश्म और उर्वरता का प्रतिशत सामान्य से

उच्च तक होता है। इस मिट्टी का रंग भूरा होता है तथा जल धारण करने की क्षमता अपेक्षाकृत कम होती है। सिंचाई सुवधिाओं का विकास हो जाने के कारण इस क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ गयी है।

5. **चीका मिट्टी –**

इस प्रकार की मिट्टी बांगर क्षेत्र के दक्षिणी निम्न मैदानी भाग में मिलती है। यह मिट्टी गहरा भूरा एवं कालापन लिए हुए होती है, क्योंकि इस प्रकार की मिट्टी में जैविक पदार्थों का मिश्रण अधिक होता है। यह मिट्टी अनुर्वर हो जाती है। इसे ऊसर या उसरीली मिट्टी भी कहते हैं।

6. क्षारीय एवं लवण युक्त मिट्टी–

इस प्रकार की मिट्टी रतनपुरा विकास खण्ड के पिश्चमी भाग में पायी जाती है। कैल्शियम कार्बोनेट के जमाव के कारण निचले स्तर में कंकड का जमाव होने से अधःस्तर का संबंध ऊपरी स्तर से टूट जाता है, जिसके फलस्वरूप लवण या क्षार ऊपरी हिस्से में जमा हो जाता है और यह मिट्टी अनुर्वर हो जाती है। इसे ऊसर या उसरीली मिट्टी भी कहते है।

मृदा उर्वरता –

मृदा उर्वरता मृदा की वह क्षमता है, जो शस्यों को एक निश्चित उत्पादन प्रदान करने में समर्थ रहती है। इसलिए यह शस्य उत्पादन सम्भाव्यता को प्रभावित करने वाले कारकों पर निर्भर करती है। मृदा उत्पादकता एवं मृदा उर्वरता समानार्थी नहीं है। यह आवश्यक नहीं की कोई

उर्वर मृदा उत्पादक नहीं हो सकती है। इसी प्रकार फसल उत्पादन की मात्रा उर्वर मृदा में लवण या क्षार की मात्रा बढ़ने से सीमित हो जाती है। दूसरी तरफ उर्वरक एवं सिंचाई की व्यवस्था करके कम उर्वर मृदा को भी उत्पादकत बना लिया जा सकता है। (सिंह, उर्मिलेश, 2002, पृ0 53)

मृदा उर्वरता के निर्धारण में कुछ प्रकृतिजन्य कारक होते हैं जो मानव नियंत्रण के बाहर है। जैसे स्थलाकृति, मृदा गठन, मृदा पार्श्विका एवं जलवायुविक विशेषताएं आदि यद्यपि मानवीय प्रयासों द्वारा इनको परिष्कृत करने वाले कारक भी महत्वपूर्ण होते हैं तथापि मनुष्य इनका प्रयोग अधिकतम फसल उत्पादन के लिए ही कर पाता है।

मृदा उत्पादकता :–

मृदा की उत्पादकता मृदा उर्वरता के अतिरिक्त जलवायु तथा कृषि तकनीक से भी प्रभावित होती है। अध्ययन क्षेत्र में जल का स्त्रोत, वर्षा उवं हिमाच्छादित पर्वतो से निकली नदियॉ है। वर्ष के जुलाई, अगस्त एवं सितम्बर माह को छोडकर शेष सभी महीनो में जलाभाव रहता है। इस प्रकार सम्पूर्ण क्षेत्र में जलाधिक्य की अपेक्षा जलाभाव अधिक है। परिणामस्वरूप यहा मृदा उत्पादकता की कमी है। इस कमी की पूर्ति सिचाई द्वारा की जाती है।

मृदा सम्बधी समस्याऍः–

मृदा की उर्वरा शक्ति का हास होना इसकी प्रमुख समस्या है। यह समस्या निक्षालन, जल प्लावन, क्षारीय तत्वो की अधिक वृद्धि, वन अपरोपण

तथा भूमि के दुरूपयोग के कारण उत्पन्न होती है। अध्ययन क्षेत्र में मृदा संबंधी निम्नाकित समस्याएं दृष्टिगोचर होती है।

1. निक्षालन –

निक्षालन में कार्बनिक पद्वार्थ पेड पौधो की सामग्री एवं खनिज लवण धीरे–धी मृदा से निकल जाते है। मृदा में उपरी परत की अपेक्षा निचली परत में यह क्रिया अधिक तीब्र होती है। जिसके फल स्वरूप कोलाइड तथा अन्य आधार भूत तत्व छनकर नीचे चला जाते है।

अध्ययन क्षेत्र के उपरी–तराई भाग में वर्षा की मात्रा अधिक होने एव अपेक्षाकृत कम वाष्पीकरण के फलस्वरूप निक्षालन प्रक्रिया की तीब्रता पायी जाती है। तराई के अतिरिक्त जल जमाव वाले क्षेत्र में भी निक्षालन द्वारा उर्वरता का द्वारा होता है।

2. जल प्लावन–

जल प्लावन वाले क्षेत्रो में प्रतिवर्ष मृदा का जमाव होता है, जिससे मृदा उर्वरता प्रभावित होती है। कभी–2 मुदा उर्वर वाले भाग में रेत का जमाव हो जाने के कारण उर्वरता क्षीण हो जाती है। जल प्लावन के करण मृदा अपरदन में तीब्रता होती है। अध्ययन क्षेत्र के घाघरा एवं उसकी सहायक नदियो के समीपस्थ भू–भाग जल प्लावित क्षेत्र है।

3. मृदा में क्षारीयता –

मृदा में क्षारीयता मृदा की एक प्रमुख समस्या है। अध्ययन क्षेत्र के कुछ भू–भाग में जहॉ पर भूमि के निचले स्तर कंकड का जमाव है, क्षारीय मृदा पायी जाती है। यह मृदा या तो एक समतल पटटी के रूप में या कुछ वर्ग मीटर क्षेत्रफल में पायी जाती है। क्षारीय मृदा की रसायनिक संरचना सोडियम कार्बोनेट, सोडियम सल्फेट एवं लवणो द्वारा होती है। यह मृदा रेह के रूप में पायी जाती है। मृदा में क्षारीयता की वृद्धि के फलस्वरूप मृदा अपरदन में वृद्धि होती है तथा भूमिगत जल तल भी नीचा हो जाता है।

4. अनियंत्रित पशुचारण–

मनमाने ढंग से पशुचारण प्रथा एवं अनियमिता भी अध्ययन क्षेत्र की मृदा की प्रमुख समस्या है। अनियमित पशुचारण के परिणामस्वरूप मृदा की उपरी सतह से वनस्पति नष्ट हो जाती है तथा ग्रीष्म ऋतु में पशुओ के चरने में मृदा की उपरी सतह की अपक्षय होता रहता है, जिससे वर्षा ऋतु में तीब्र अपरदन होता है।

5. वन विनाश–

प्राचीन काल से ही मानव ने वनो को काटकर कृषि कार्य प्रारम्भ किया था। पिछली शताब्दी में वन अपरोपण या वन विनाश अत्यधिक हुआ है। परिणामस्वरूप बाढ़ की समस्या बढ़ी तथा मृदा अपरदन में भी वृद्धि हुई है जिससे मृदा उर्वरता में हास हुआ है।

6. मृदा अपरदन की समस्या–

अध्ययन क्षेत्र में मृदा की सबसे बड़ी समस्या मृदा अपरदन है। अध्ययन क्षेत्र में मृदा अपरदन का प्रमुख कारक बहता हुआ जल है। इसके अतिरिक्त मृदा के कटाव की प्रक्रिया में मनुष्य द्वारा अनुचित ढंग से मृदा का उपयोग भी सहायक है।

जल द्वारा अपरदन तीन प्रकार का होता है–

अ. परत अपरदन

ब. अल्पसरित अपरदन

स. अवनलिका अपरदन

अ. परत अपरदन–

परत अपरदन में वर्षा के जल के साथ मृदा के उपरी भाग से मृदा के कण बह जाते है। जैव पदार्थो की कमी तथा वनस्पतिहीन अत्यधिक चराये गये या जोत कर छोड गये क्षेत्रो में यह अपरदन अधिक होता है।

ब. अल्पसरित अपरदन–

अल्पसरित अपरदन सामान्यतया ढ़ालू भूमि, जहॉ पर ढाल के समानान्तर जुताई आदि के कारण मृदा उपरी परत ढीली रहती है, अधिक होता है। अध्ययन क्षेत्र अल्पसरित अपरदन छोटी–छोटी नदियो एवं नालो के किनारे वाले भागो में होता है।

स. अवनलिका अपरदन–

अवनलिका अपरदन, अल्पसरित अपरदन का ही विकसित रूप है। इसमें अपरदन अधिक होता है, जिसके कारण वी आकार का नालियो का निर्माण हो जाता है। अध्ययन क्षेत्र में बलुई दोमट मृदा वाले भागो नदी एवं नालो के किनारे यह अपरदन अधिक होता है।

मृदा उर्वरता स्तर के विश्लेषण से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र की मृदा में पोषक तत्वो की कमी है। अतः खादो एवं उर्वरको से इनकी आवश्यकता आपूर्ति हो सकती है। मुदा संरक्षण हेतु अध्ययन क्षेत्र के अपरदित भाग समतलीकरण, मेड़बंदी, वृक्षारोपण एवं शस्यो की कृषि सहायक सिद्ध हो सकती है। अध्ययन क्षेत्र क`जल जमाव वाले भाग में जल निकासी द्वारा फसलो के हेरफेर से मृदा की उत्पादकता को व्यवस्थित बनाये रखना आवश्यक है।

खनिज एवं पशु संसाधन–

किसी भी क्षेत्र में पर्याप्त रूप से उपलब्ध खनिज सम्पदा उस क्षेत्र के विकास की द्योतक होती है परन्तु अध्ययन क्षेत्र में इस अत्यन्त महत्वपूर्ण

संसाधन का नितान्त अभाव है। यहॉ खनिज संसाधनो के नाम पर नदियो के किनारे बालू उपलब्ध है। जनपद के उत्तर पूर्वी भाग में घाघरा एवं टोंस नदियों के किनारे मोटी कणो वाली सफेद बालू उत्खनन का कार्य नदी के मध्यवर्ती पाट क्षेत्रो में नावो के माध्यम से किया जाता है। जनपद के ग्रामीण क्षेत्रो में कही–2 कच्ची मिटटी के बर्तन बनाने हेतु उत्तम किस्म की मिटटी का उत्खनन किया जाता है। कुछ क्षेत्र में रेह से नौसादर बनाने का कार्य किया जाता है। (तिवारी, वृजेश कुमार)

अध्ययन क्षेत्र में अर्थतंत्र के पूर्णतया कृषि पर निर्भर होने के कारण पशु संसाधन का बुनियादी महत्व बना हुआ है। यद्यपि वर्तमान में कृषि में आधुनिक उपकरणो जैसे टैक्टर थ्रेसर, पम्पिग सेट एवं हार्वेस्टर इत्यादि के प्रयो से पशु शक्ति मुख्यतया बैलो की संख्या पर निर्भरता काफी कम हो गयी है, साथ ही यह उल्लेखनीय है दुधारू पशुओ की संख्या में विगत वर्षो में पर्याप्त वृद्धि हुई है। जनपद में पशुपालन पारम्परिक कृषि उद्यम का एक पूरक व्यवसाय है। इसके द्वारा किसानो को पशु शक्ति एवं खाद जैसे उपयोग कृषि निवेश प्राप्त होते है। इसके साथ पशुपालन से दुग्ध, मास, एवं अंडे, प्राप्त होते है। जनपद की आर्थिक उन्नति हेतु पूरक रोजगार व्यवस्था में पशुपालन उद्यम का विशेष महत्व है। वर्ष 1997 की पशु गणन के अनुसार जनपद में कुल पशुओ की संख्या 4,86,779 थी, इसमें गायो की संख्या 1,71,468 एवं भैसो की संख्या 1,23,038 थी जो कुल पशुधन संख्या का क्रमशः 15.3 प्रतिशत एवं 8.2 प्रतिशत है। प्रदेश में उपलब्ध सम्पदा के अधिकतम आर्थिक उपयोगो को सुनिश्चित

करने के लिए इनके स्वास्थ्य के अनुरक्षण तथा नस्ल सुधार द्वारा इन पशुओ की उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास जारी है। वर्ष 2002–02 में जनपद में 26 पशु चिकित्सालय, 24 पशुधन विकास केन्द्र, 3 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र, 16 कृत्रिम गर्भाधान उपकेन्द्र थे। वर्ष 2002–03 में भी पशु चिकित्सालय 26 ही है। तथा कृत्रिम गर्भाधान उपकेन्द्र 38 हो गये। जनपद में पशुओ के नस्ल को सुधारने हेतु वर्ष 2002–03 में 8693 गायों तथा 8267 भैसों का कृत्रिम गर्भाधान कराया गया।

अध्ययन क्षेत्र में कुछ पशु संसाधनो का वितरण प्रायः जाति का अनुसरण करता है। उदाहरण स्वरूप अधिकांश भेड पालन गडेरियो, सुअर पालन– दुसाध मुसहर, एवं डोमो तथा गदहा पालन धोबियों से संबंधित है। गाय, बैल, भैस, सामान्य रूप से प्रत्येक जाति के पास मिलते है, परन्तु यादव जाति में दुधारू पशुओ की संख्या अपेक्षाकृत अधिक पायी जाती है। कुक्कुट पालन प्रधानतः मुसलमान एवं हरिजन वर्गो में देखने को मिलता है परन्तु बदलते सामाजिक –आर्थिक परिवेश में उक्त पशु वितरण पद्धति में धीरे–2 परिवर्तन हो रहा है और स्वर्ण जातियो के कुछ ो भी मुर्गी पालन एवं सुअर पालन की ओर उन्मुख हो रहे है।

निष्कर्ष

अध्ययन क्षेत्र जनपद मऊ मे प्राकृतिक संसाधनो के विश्लेषण से स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का अभाव है। प्राकृतिक संसाधनो के रूप में मात्र मिटटी संसाधन , जल संसाधन, पशु संसाधन, एवं कुछ मात्रा में

वन संसाधन ही उपलब्ध है। खनिज संसाधनो का पूर्णतया अभाव है। खनिज संसाधनो के रूप में मात्र बालू एवं रेह मिलता है, किन्तु इस क्षेत्र में जो भी संसाधन उपलब्ध है, उनका भी अभी तक पूर्ण एवं उचित उपयोग नही हो पा रहा है। जिससे इन संसाधनो के समक्ष उपयोग जनित एवं संरक्षण संबंधी समस्याये उत्पन्न हो रही है। अतः आवश्यकता इस बात की है इन संसाधनो का उचित उपयोग, लाभकारी उपयोग एवं बचन प्रक्रिया अपनाकर इनका संरक्षण किया जाय ताकि चिरकाल तक इनका उपयोग संभव हो सकें।

संदर्भ

1. Agrawal, R.R. 1967, "Soil fertility in India" Bombay.
2. Mishra, D.N., 1983, "Forest staitics, Uttar pradesh, Lucknow.
3. Rao, V.S., 1961, "Indian frorestry, Vol. (1881-1966) Dehradun.
4. Singh, B.B. 1987, "Agriculture Geography, Tara, publication, Varanshi.
5. तिवारी, सी0पी0, 2002, ''सतही जल संसाधन : क्षमता, समस्या एवं प्रबंध'' रीवां जिले के विशेष संदर्भ में, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, उत्तर भारत भूगोल परिषद्, गोरखपुर, अंक–36 संख्या 1–2, पृष्ठ 41–48
6. तिवारी, वृजेश कुमार, ''जनपद मऊ (उ0प्र0) में जनसंख्या पर्यावरण एवं विकास'', अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पुर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।

7. पाण्डेय, जे0एन0, 1989, ''सरयूपार मैदान में जल संसाधन उपयोग एवं संरक्षण'' उत्तर भारत भूगोल, पत्रिका, अंक–25, संख्या–2, पृष्ठ 47–64

8. पाठक, गणेश कुमार, 2003, ''उपलब्ध जल संसाधनों का दुरूपयोग से बचाव'', भागीरथ, केन्द्रीय जल आयोग, नई दिल्ली।

9. पाठक, गणेश कुमार एवं चौबे, संजीव कुमार, 2004, ''जनपद बलिया (उ0प्र0) के जल संसाधनों की उपलब्धता, उपयोग दुरूपयोग एवं संरक्षण'', भगीरथ, केन्द्रीय जल आयोग, नई दिल्ली, जनवरी–मार्च, 2004।

10. शुक्ल, श्रवण कुमार, 2002, ''जल संसाधन प्रबंधन'' मनकापुर विकास खण्ड का प्रतीक अध्ययन'', उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, गोरखपुर अंक–38, संख्या 1–2, पृष्ठ 14–22

11. सिंह, उर्मिलेश, 2002, ''जनपद बलिया (उ0प्र0) संसाधनों का भौगोलिक विश्लेषण एवं नियोजन'' अप्रकाशित शोध प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पुर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर।